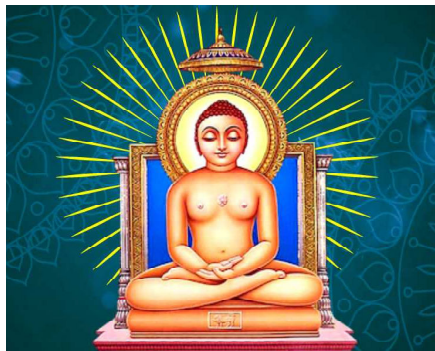


भगवान् महावीर – जीवन एवं दर्शन

– बाबू 'युगल' जैन, कोटा



वर्धमान महावीर भगवान् का जन्म भारत की इस पुण्य-वसुंधरा पर लगभग 2600 वर्ष पूर्व हुआ, उनका जन्म नाम वर्धमान था, किन्तु अजेय शक्ति-सम्पन्न होने से उन्हें महावीर कहा जाने लगा, अनेक विशिष्ट-गुण-सम्पन्न होने के कारण वे 'सन्मति', 'वीर' एवं 'अतिवीर' भी कहलाये।

तात्कालीन भारत में गणतंत्र-शासन-पद्धति थी और नागरिकों द्वारा गणराजाओं का चुनाव किया जाता था, उस समय भारतवर्ष के पूर्वीय-अंचल के मध्यदेश में वैशाली-गणतंत्र की न्याय-व्यवस्था समग्र-भारत में विख्यात थी, वैशाली का ही एक भाग 'कुंडग्राम' (कुंडपुर) था और उस गणराज्य के अधिपति नाथवंशीय क्षत्रिय-राजा सिद्धार्थ थे, उनकी रानी त्रिशला के गर्भ से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को वर्धमान का जन्म हुआ।

वर्धमान महावीर भगवान् के रूप में नहीं वरन् एक सामान्य-राजकुमार की तरह पैदा हुए, विवाह नहीं किया, 30 वर्ष में दीक्षित होकर अन्तर्मुखी साधना द्वारा मोह, राग व द्वेष का उन्मूलन कर 42 वर्ष में वीतराग एवं सर्वज्ञ अरहंत-पद पर आसीन हो गये और अपनी सर्वज्ञता अथवा कैवल्य-किरणों से सम्पूर्ण-विश्व के पदार्थों का प्रत्यक्ष-अवलोकन करने लगे एवं 72 वर्ष में निर्वाण प्राप्त किया।

भगवान् महावीर 'वर्द्धमान' मोक्षगामी ऐतिहासिक-महापुरुष हुए हैं। उनके अंतरंग एवं बहिरंग वास्तविक-जीवन का अनेक-विद्वानों तक को परिचय न होने के कारण उनके संबंध में अनेक भ्रान्तियाँ उत्पन्न करते हैं और उनको जैनधर्म का जन्मदाता मानते हैं, जबकि निष्पक्ष ऐतिहासिक विद्वान् तो महावीर के पूर्ववर्ती भगवान् पार्श्वनाथ को भी ऐतिहासिक-पुरुष मानने लगे हैं। धर्म तो सदैव कुदरती त्रैकालिक सत्य होता है, इसलिए उसका कभी नया जन्म नहीं होता, केवल भगवान् महावीर जैसे महापुरुष समय-समय पर उत्पन्न होकर सत्य-धर्म का पुनरुत्थापन किया करते हैं। भगवान् महावीर से पूर्व जैनधर्म के प्रणेता भगवान् आदिनाथ से लेकर 23 तीर्थंकर आज भी निष्पक्ष-समालोचकों द्वारा स्वीकार किये जाते हैं।

इस युग के प्रथम-तीर्थंकर भगवान् आदिनाथ का तो जैन एवं जैनेतर पुराणों में शिव, ब्रह्मा, विष्णु आदि नामों से पुकारा गया है और उपनिषदों में भी भगवान् महावीर का वर्णन नग्न-दिगम्बर परम-वीतराग-पुरुष के रूप में उपलब्ध होता है।

यह बात तो सभी भारतीय-दर्शनों को निर्विवादरूप से स्वीकार होगी कि धर्म सत्य की ही पर्याय होता है और जगत् के जड़-चेतन-पदार्थों की स्वयंसिद्ध-व्यवस्था उसका आधार होती है। लोक में भी उसी बात को सत्य माना जाता है, जो वस्तु का सही प्रतिपादन करती है। जैसे मनुष्य एक वस्तु है, अब उसे यदि कोई व्यक्ति पशु मानता है, तो उसी को असत्य कहते हैं, इसीतरह भगवान् महावीर और उनके सदृश्य जितने भी तीर्थंकर, अरिहंत-महापुरुष हुए उन्होंने भी बताया कि सम्पूर्ण जड़-चेतन जगत् यथावत् अनादिकाल से अवस्थित है, केवल वस्तु अपने अस्तित्व को सदैव बनाये रखकर पर्यायों में स्वयमेव ही नाना-परिवर्तन अनादि-अनन्त-क्रिया करती है।

प्रायः सभी दर्शन यह भी स्वीकार किया करते हैं कि जिस वस्तु का अस्तित्व सदा से ही किसी भी रूप में न हो अर्थात् वह सर्वथा असत् हो

तो विश्व की कोई भी शक्ति चाहे वे विश्व के द्वारा माने जाने वाले परमात्मा ही हो, असत् वस्तु को किसी भी तरह पैदा नहीं कर सकते; क्योंकि वस्तु असत् होने के कारण उसकी संपूर्ण-सामग्री का भी अभाव होना चाहिए। इसलिए आकाश के पुष्प की तरह सर्वथा असत् होने के कारण उसे कोई भी शक्ति पैदा करके उसे अस्तित्व नहीं दे सकती। दूसरा अर्थ यह हुआ कि विश्व के जड़-चेतन सारे पदार्थ अपने-अपने अस्तित्व की सीमा में पूरीतरह स्वतंत्रता से रहते हैं और अनंतकाल तक रहते रहेंगे। इसीलिए सृष्टि की कोई भी महान्-शक्ति उनकी उत्पादक नहीं हो सकती। इसप्रकार सुयुक्तियों के द्वारा अंधविश्वास को एक ओर रखकर जैनधर्म ने सम्पूर्ण अनंत जड़-चेतनरूप सृष्टि को स्वयंसिद्ध, अकृत और अनादि-अनंत स्वीकार किया है। इससे यह भी फलित हुआ कि जगत् का प्रत्येक जड़-चेतन-पदार्थ अपनी सीमा से बाहर निकलकर किसी दूसरे की सीमा में अतिक्रमण करके उसे कभी भी बाधा नहीं देता। सृष्टि की इस स्वतंत्र-व्यवस्था के आलोक में जैनदर्शन ने और उसके तीर्थंकर जैसे महापुरुषों ने यह घोषणा की कि वस्तु-व्यवस्था के विपरीत किसी पदार्थ को किसी पदार्थ का साधक अथवा बाधक तथा इष्ट और अनिष्ट मानकर उसे मिथ्या-ममत्व के द्वारा अपने अधिकार में लेने की चेष्टा ही अज्ञान का भयंकर अपराध है और अज्ञान के साथ जगत् के किसी भी पदार्थ के प्रति चेतन अथवा आत्मा के द्वारा अनधिकार से किया जाने वाला ममत्व ही विश्व का सर्व घोर अपराध है। यद्यपि आज तक किसी आत्मा के द्वारा किया जानेवाला निजी-वस्तु पर अपना अधिकार घोषित करनेवाले यह अज्ञान और ममत्व सार्थक नहीं हुए; किन्तु आत्मा ज्ञान-स्वरूप चेतन पदार्थ होने के कारण स्वयं इस अज्ञान में बदनियत होकर परिणत होता है और इसीलिए उस भयंकर-अपराध के फलस्वरूप उसे अनगिनत महान्-संकटों का सामना करना पड़ता है।

सचाई तो यह है कि अपने द्वारा बदनियत अथवा दुष्ट अभिप्राय से

उत्पन्न यह अज्ञान अथवा ममत्व अनादिकाल से आज तक भी विश्व के एक भी पदार्थ को सृष्टि अथवा जगत को, जो कि स्वयं अत्यन्त स्वतंत्र होने के कारण अपना परमेश्वर है, कोई अपने अधिकार नहीं ले पाया, फिर भी लोक के विधान की तरह आत्मा को अनन्त-कष्ट उठाने ही पड़ते हैं, क्योंकि सजा कार्य की नहीं होती; बल्कि बदनियत की होती है। किसी ड्राइवर से सड़क पार करता हुआ कोई बालक मर जाये, तो सजा ड्राइवर को नहीं होती, क्योंकि दोष बालक का है और चूँकि ड्राइवर की बालक को मारने की नियत बिल्कुल नहीं थी, इसलिए वो निरपराध माना जाता है। यद्यपि उसके द्वारा बालक की मृत्यु जैसा दयनीय और शोचनीय-कार्य तो हुआ है। वस्तु-व्यवस्था के इस प्रकाश में महावीर ने एक न्यायाधीश की तरह अत्यन्त वीतराग होकर यह संदेश विश्व को दिया कि ज्ञान से विभूषित होने पर भी आत्मा अज्ञान और ममत्व जैसे जो अपराध करता है, वह कुदरत के विधान का उल्लंघन करनेवाला वह आत्मा अपराधी होता है।

अनैकांतिक-वस्तुव्यवस्था के संदर्भ में महावीर ने कहा कि समग्र-विश्व में अनन्त-चेतन एवं अनन्त-जड़पदार्थ हैं, सभी पदार्थ परस्पर अत्यन्त-भिन्न एवं स्वयंसिद्ध एवं अनादि-निधन है, कोई उनका कर्ता, धर्ता एवं हर्ता नहीं है, कोई पदार्थ सर्वथा-नया उत्पन्न नहीं होता और किसी पदार्थ का सर्वथा-नाश नहीं होता। प्रत्येक पदार्थ अनेक अंत अर्थात् अनन्त-धर्म अथवा अनन्त-शक्तिमय है, वह सदा ही अपनी स्वरूपसीमा में रहता है, इसका कारण उसके भीतर सदैव-विद्यमान अस्ति-शक्ति है और कभी भी किसी अन्य-पदार्थ का उसमें प्रवेश न होने से अन्य-पदार्थ का उसमें सदैव अभाव रहता है, इसका कारण उसकी नास्ति शक्ति है। इसप्रकार एक ही पदार्थ एकसमय में प्रत्येक-पदार्थ की सत्ता प्रतिसमय नित्य अर्थात् वहीं की वहीं रहती है, नष्ट नहीं होती, इसका कारण उसकी नित्य शक्ति है, साथ ही उसमें प्रतिसमय नई-नई वृत्तियों का अवसान

होता रहता है, इसका कारण उसकी अनित्य शक्ति है, इसप्रकार एक ही समय में वस्तु नित्य भी एवं अनित्य भी, जैसे कि आत्मा में लोभ की वृत्ति का व्यय होकर क्रोध की वृत्ति पैदा होती है और फिर क्रोध का भी व्यय होकर दूसरे ही क्षण में उसका जन्म होता है, किन्तु आत्मा तो वहीं रहती है, आत्मा का अभाव होकर नयी आत्मा पैदा नहीं होती, वरन् एक वृत्ति (पर्याय) का अभाव होकर नई वृत्ति का जन्म होता है और यह श्रृंखला अनंतकाल तक प्रत्येक पदार्थ में इसीप्रकार चलती रहती है। इसप्रकार प्रत्येक वस्तु सदैव अस्ति-नास्ति एवं नित्य-अनित्य जैसी परस्पर-विरुद्ध अनंतशक्तिमय है, जिनके कारण वस्तु का वस्तुत्व सुरक्षित रहता है। इसप्रकार प्रत्येक वस्तु की यह परस्पर-विरुद्ध अनंतशक्तिमयता ही महावीर का अनेकांत है।

महावीर आत्मवादी-महापुरुष हुए, अतः उनके अनेकांत-दर्शन की सम्पूर्ण-उपयोगिता भी आत्मा के लिए है। 'अनेकांत' सत्य एवं असत्य का समझौता नहीं कराता, वरन् अनैकांतिक-बोध का सम्पूर्ण-व्यवसाय सत्य एवं यथार्थ में ही होता है और वह आत्मा को पतित-भूमिकाओं में से उठाकर पवित्रतम-भूमिका में स्थापित कर देता है।

'अनेकांत' के आलोक में जब आत्मा विश्व-व्यवस्था का अवलोकन करता है, तो उसे विदित होता है कि समग्र-विश्व की अत्यन्त स्वतंत्र-व्यवस्था में कोई पदार्थ मेरा 'कर्म' नहीं है और मैं उसका 'कर्त्ता' अर्थात् स्वामी नहीं हूँ। इसीप्रकार मैं किसी पदार्थ का 'कर्म' नहीं हूँ और वह मेरा 'कर्त्ता' नहीं है। मेरा आनन्दमय-चैतन्य अर्थात् मेरा आत्मा ही मेरा है और वही मेरा सर्वस्व है। इसी चिंतनधारा में वह अपने को समग्र-विश्व के कर्तृत्व के महाभार से मुक्त अनुभव करता है। अतः अज्ञान से उत्पन्न कर्तृत्व के बीच से अत्यन्त-व्याकुल, खिन्न एवं विकीर्ण अपनी बोधि को समेटकर अपने सुधासिंधु-चैतन्य में समाहित कर लेता है और उसके सुधासिंधु-आनन्द का अविरल-रसास्वादन करता है। महावीर के दर्शन

में यही साधक की समाधि एवं योगमुद्रा है और इसकी पराकाष्ठा ही मुक्ति है।

महावीर की बहुचर्चित-अहिंसा की आधारशिला भी इनका अनैकांतिक-दर्शन ही है। आज महावीर की अहिंसा 'जिओ और जीने दो' के वायुमंडल में प्रतिबद्ध होकर जीवन की संरचना में निष्प्राण हो गई है। अहिंसा के संदर्भ में महावीर ने कहा है कि अनैकांतिक-वस्तुव्यवस्था में एक जीव के जीवन पर दूसरे जीव का कोई अधिकार नहीं है, अतः किसी जीव के परिपीड़न अथवा रक्षा का अहंकार कर, उसमें उत्पन्न राग-द्वेष की वृत्तियाँ मिथ्या हैं एवं उनसे अपनी आत्मा का ही घात होता है, अतएव राग-द्वेष एवं वृत्तियाँ ही हिंसा हैं। अहिंसा के इस भव्य-स्वरूप का परिज्ञान होने पर आत्मा अपनी उन मिथ्या एवं अकिंचित्कर-वृत्तियों से अनासक्त होकर उन्हें विराम देता है और लौटकर अपने चैतन्य में ही तन्मय होता है। अतः भगवती अहिंसा की आनंदमयी-भूमिकाओं पर आरोहण करता हुआ अहिंसा की चरमावस्था-मुक्ति अथवा परिनिर्वाण को प्राप्त कर लेता है। आत्मा की इस उच्चतम एवं पावन-अवस्था को ही परमात्मा कहते हैं और यही महावीर के अनेकांत-दर्शन की सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि है।

सचमुच वह जैनदर्शन का अनेकांत-सिद्धांत ही है, जो समस्त भारतीय-दर्शनों से अलग पहिचाना जाता है।

अतः महावीर ने कहा कि हे ज्ञान से विभूषित जगत के प्राणियों इस परम सत्य सुन्दर, अक्षय, अनंत शक्तिसम्पन्न सत्ता को स्वीकार कर उसमें अहं करो, तो तुम स्वयं ही अपने भीतर से उत्पन्न हुए आनंद व परम शांति का अनंत भविष्य तक भोग करते रहोगे और यही मंगलमय मुक्ति के मंगल प्रभात का मंगल क्षण होता है।

5 अप्रैल 2022

पूज्य बाबूजी 'युगल' जी, कोटा के

98वें जन्मदिवस पर...

- आचार्य कुन्दकुन्द फाउण्डेशन

कोटा

मोबा. 9414181512